नमो नमो निम्मलदंसणस्स

बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथाय नम:

पूज्य आनन्द-क्षमा-ललित-सुशील-सुधर्मसागर-गुरूभ्यो नम:

आगम-३५

बृहत्कल्प

आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद

अनुवादक एवं सम्पादक

आगम दीवाकर मुनि दीपरत्नसागरजी

[M.Com. M.Ed. Ph.D. श्रुत महर्षि]

'आगम' हिन्दी-अनुवाद-श्रेणी पुष्प-३५

आगमसूत्र-३५- 'बृहत्कल्प'

छेदसूत्र-२- हिन्दी अनुवाद

कहां क्या देखे ?

क्रम	विषय	पृष्ठ	क्रम	विषय	पृष्ठ
१	उद्देशक- १	०५	४	उद्देशक- ४	१२
२	उद्देशक- २	०८	५	उद्देशक- ५	१५
३	उद्देशक- ३	१०	६	उद्देशक- ६	१८

४५ आगम वर्गीकरण					
क्रम	आगम का नाम	सूत्र	क्रम	आगम का नाम	सूत्र
०१	आचार	अंगसूत्र-१	२५	आतुरप्रत्याख्यान	पयन्नासूत्र-२
०२	सूत्रकृत्	अंगसूत्र-२	२६	महाप्रत्याख्यान	पयन्नासूत्र-३
०३	स्थान	अंगसूत्र-३	२७	भक्तपरिज्ञा	पयन्नासूत्र-४
०४	समवाय	अंगसूत्र-४	२८	तंदुलवैचारिक	पयन्नासूत्र-५
०५	भगवती	अंगसूत्र-५	२९	संस्तारक	पयन्नासूत्र-६
०६	ज्ञाताधर्मकथा	अंगसूत्र-६	३०.१	गच्छाचार	पयन्नासूत्र-७
०७	उपासकदशा	अंगसूत्र-७	३०.२	चन्द्रवेध्यक	पयन्नासूत्र-७
०८	अंतकृत् दशा	अंगसूत्र-८	३१	गणिविद्या	पयन्नासूत्र-८
०९	अनुत्तरोपपातिकदशा	अंगसूत्र-९	३२	देवेन्द्रस्तव	पयन्नासूत्र-९
१०	प्रश्नव्याकरणदशा	अंगसूत्र-१०	३३	वीरस्तव	पयन्नासूत्र-१०
११	विपाकश्रुत	अंगसूत्र-११	३४	निशीथ	छेदसूत्र-१
१२	औपपातिक	उपांगसूत्र-१	३५	बृहत्कल्प	छेदसूत्र-२
१३	राजप्रश्निय	उपांगसूत्र-२	३६	व्यवहार	छेदसूत्र-३
१४	जीवाजीवाभिगम	उपांगसूत्र-३	३७	दशाश्रुतस्कन्ध	छेदसूत्र-४
१५	प्रज्ञापना	उपांगसूत्र-४	३८	जीतकल्प	छेदसूत्र-५
१६	सूर्यप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-५	३९	महानिशीथ	छेदसूत्र-६
१७	चन्द्रप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-६	४०	आवश्यक	मूलसूत्र-१
१८	जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति	उपांगसूत्र-७	४१.१	ओघनिर्युक्ति	मूलसूत्र-२
१९	निरयावलिका	उपांगसूत्र-८	४१.२	पिंडनिर्युक्ति	मूलसूत्र-२
२०	कल्पवतंसिका	उपांगसूत्र-९	४२	दशवैकालिक	मूलसूत्र-३
२१	पुष्पिका	उपांगसूत्र-१०	४३	उत्तराध्ययन	मूलसूत्र-४
२२	पुष्पचूलिका	उपांगसूत्र-११	४४	नन्दी	चूलिकासूत्र-१
२३	वृष्णिदशा	उपांगसूत्र-१२	४५	अनुयोगद्वार	चूलिकासूत्र-२
२४	चतु:शरण	पयन्नासूत्र-१	---	----------	-----

मुनि दीपरत्नसागरजी प्रकाशित साहित्य

आगम साहित्य			आगम साहित्य		
क्र	साहित्य नाम	बूक्स	क्रम	साहित्य नाम	बूक्स
1	मूल आगम साहित्य:-	147	6	आगम अन्य साहित्य:-	10
	-1- आगमसुत्ताणि-मूलं prin	[49]		-1- આગમ કથાનુયોગ	06
	-2- आगमसुत्ताणि-मूलं Net	[45]		-2- आगम संबंधी साहित्य	02
	-3- आगममञ्जूषा (मूल प्रत)	[53]		-3- ऋषिभाषित सूत्राणि	01
2	आगम अनुवाद साहित्य:-	165		-4- आगमिय सूक्तावली	01
	-1- આગમસૂત્ર ગુજરાતી અનુવાદ	[47]		आगम साहित्य- कुल पुस्तक	516
	-2- आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद Net	[47]			
	-3- AagamSootra English Trans.	[11]			
	-4- આગમસૂત્ર સટીક ગુજરાતી અનુવાદ	[48]			
	-5- आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद prin	[12]		अन्य साहित्य:-	
3	आगम विवेचन साहित्य:-	171	1	तत्त्वाभ्यास साहित्य-	13
	-1- आगमसूत्र सटीकं	[46]	2	सूत्राभ्यास साहित्य-	06
	-2- आगमसूत्राणि सटीकं प्रताकार-1	[51]	3	व्याकरण साहित्य-	05
	-3- आगमसूत्राणि सटीकं प्रताकार-2	[09]	4	व्याख्यान साहित्य-	04
	-4- आगम चूर्णि साहित्य	[09]	5	जिनभक्ति साहित्य-	09
	-5- सवृत्तिक आगमसूत्राणि-1	[40]	6	विधि साहित्य-	04
	-6- सवृत्तिक आगमसूत्राणि-2	[08]	7	आराधना साहित्य	03
	-7- सचूर्णिक आगमसुत्ताणि	[08]	8	परिचय साहित्य-	04
4	आगम कोष साहित्य:-	14	9	पूजन साहित्य-	02
	-1- आगम सद्दकोसो	[04]	10	तीर्थंकर संक्षिप्त दर्शन	25
	-2- आगम कहाकोसो	[01]	11	प्रकीर्ण साहित्य-	05
	-3- आगम-सागर-कोष:	[05]	12	दीपरत्नसागरना लघुशोधनिबंध	05
	-4- आगम-शब्दादि-संग्रह (प्रा-सं-गु)	[04]		आगम सिवायनुं साहित्य कूल पुस्तक	85
5	आगम अनुक्रम साहित्य:-	09			
	-1- આગમ વિષયાનુક્રમ- (મૂળ)	02		1-आगम साहित्य (कुल पुस्तक)	516
	-2- आगम विषयानुक्रम (सटीकं)	04		2-आगमेतर साहित्य (कुल	085
	-3- आगम सूत्र-गाथा अनुक्रम	03		दीपरत्नसागरजी के कुल प्रकाशन	601

મુનિ દીપરત્નસાગરનું સાહિત્ય

1	મુનિ દીપરત્નસાગરનું આગમ સાહિત્ય	[કુલ પુસ્તક 516]	તેના કુલ પાના [98,300]
2	મુનિ દીપરત્નસાગરનું અન્ય સાહિત્ય	[કુલ પુસ્તક 85]	તેના કુલ પાના [09,270]
3	મુનિ દીપરત્નસાગર સંકલિત 'तत्त्वार्थसूत्र'ની વિશિષ્ટ DVD		તેના કુલ પાના [27,930]

અમારા પ્રકાશનો કુલ ૬૦૧ + વિશિષ્ટ DVD કુલ પાના 1,35,500

[३५] बृहत्कल्प
छेदसूत्र-२- हिन्दी अनुवाद

उद्देशक-१

इस आगम सूत्र में कुल छ उद्देशक और २१५ सूत्र हैं । पद्य कोई नहीं । इस सूत्र में अनेक बार निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थी शब्द इस्तमाल किया गया है । जिसका लोकप्रसिद्ध अर्थ साधु-साध्वी होता है । हमने पहले से अन्तिम सूत्र पर्यन्त प्रत्येक स्थान में साधु-साध्वी अर्थ स्वीकार करके अनुवाद किया है ।

सूत्र – १

साधु-साध्वी को आम और केले कटे हुए न हो तो लेना नहीं कल्पता । (यहाँ अभिन्न शब्द का अर्थ शस्त्र से अपरिणत ऐसा भी होता है । यानि किसी भी शस्त्र द्वारा वो अचित्त किया हुआ होना चाहिए । केवल छेदन-भेदन से आम अचित्त न भी हुआ हो। ताल प्रलम्ब शब्द से केला ऐसा अर्थ चूर्णी-वृत्ति के सहारे से किया गया है, लेकिन वहाँ अभिन्न शब्द का अर्थ अपक्व ऐसा होता है, उपलक्षण से तो सारे फल का यहाँ ग्रहण करना ऐसा समझना)

सूत्र – २

साधु-साध्वी को शस्त्रपरिणत या भेदन कीया गया आम या केले लेना कल्पे ।

सूत्र – ३-५

साधु को अखंड़ या टुकड़े किए गए केला लेने की कल्पे लेकिन, साध्वी को न कल्पे । साध्वी को टुकड़े किए गए केला ही ग्रहण करना कल्पता है । (अखंड़ केले का आकार लम्बा देखकर साध्वी के मन में विकार भाव पैदा हो सकता है । और उस केले से वो अनंगक्रीड़ा भी कर सकती है । वृत्तिकार बताते हैं कि केले के छोटे-छोटे टुकड़े होने चाहिए । बड़े टुकड़े भी नहीं चलते ।)

सूत्र – ६-९

गाँव, नगर, खेड़ा, कसबा, पाटण, खान, द्रोणमुख, निगम, आश्रम, संनिवेश यानि पड़ाव, पर्वतीय स्थान, ग्वाले की पल्ली, परा, पुटभेदन और राजधानी इतने स्थान में चारों ओर वाड किला आदि हो, बाहर घर न हो तो भी साधुओं को शर्दी-गर्मी में एक महिना रहना कल्पे, बाहर आबादी हो तो एक महिना गाँव में और एक महिना गाँव के बाहर ऐसे दो मास भी रहना कल्पे । गाँव आदि के बाहर बसति न हो तो शर्दी गर्मी में दो महिने रहना कल्पे वसति हो तो दो महिना गाँव में और दो महिने गाँव के बाहर ऐसे चार महिने भी रहना पड़े तो कल्पे । केवल इतना कि गाँव आदि की भीतर रहे तब गाँव की भिक्षा और बाहर रहे तब बाहर की भिक्षा लेनी कल्पे ।

सूत्र – १०-११

गाँव यावत् राजधानी में जिस स्थान पर एकवाड, एकद्वार, एकप्रवेश, निर्गमन स्थान हो वहाँ समकाल साधु-साध्वी को साथ रहना न कल्पे लेकिन अनेकवाड, अनेकद्वार, अनेक प्रवेश निर्गमन स्थान हो तो कल्पता है ।

वगडा यानि वाड, कोट, प्राकार ऐसा अर्थ होता है । गाँव या घर की सुरक्षा के लिए उसके आसपास दिवाल, वाड आदि बनाए हो वो, द्वार यानि प्रवेश या नीकालने का रास्ता, प्रवेश निर्गमन यानि आने-जाने की क्रिया

स्थंड़िल भूमि, भिक्षाचर्या या स्वाध्याय आदि के लिए आते-जाते बार-बार साधु-साध्वी के मिलन से एक-दूसरे से संसर्ग बढ़े रागभाव की वृद्धि हो । संयम की हानि हो, लोगों में संशय हो यह सम्भव है ।

सूत्र – १२-१३

हाट या बाजार, गली या महोल्ले का अग्र हिस्सा, तीन गली या रास्ते इकट्ठे हो रहे हो वैसा त्रिक स्थान, चार मार्ग के समागम वाला चौराहा, छ रास्ते का मिलनेवाला चत्वर स्थान, आबादी के एक या दोनों ओर बाजार हो

ऐसा स्थान, वहाँ साध्वी का रहना न कल्पे, साधु का रहना कल्पे । (इस स्थान में साध्वी के ब्रह्मचर्य भंग की संभावना है इसलिए न कल्पे ।)

सूत्र – १४-१५

बिना दरवाजे के खुले द्वारवाले उपाश्रय में साध्वी को रहना न कल्पे, साधु को रहना कल्पे । खुले दरवाजे वाले उपाश्रय में एक पर्दा बाहर लगाकर, एक भीतर लगाकर, भीतर की ओर धागेवाला या छिद्रवाला कपड़ा बाँधकर साध्वी का रहना कल्पे । (बाहर आते-जाते तरुण पुरुष, बारात आदि देखकर साध्वी के चित्त की चंचलता होनी संभवित है इसलिए न कल्पे ।)

सूत्र – १६-१७

साध्वी को भीतर की ओर लेपवाला घटी मात्रक (मातृ करने का भाजन) रखना और इस्तमाल करना कल्पे लेकिन, साधु को न कल्पे । (साध्वी बन्द वसति में होती हैं इसीलिए परठने को जरुरी है । साधु को खुली वसति में रहना होता है इसलिए मात्रक जरुरी नहीं होता ।)

सूत्र – १८

साधु-साध्वी को वस्त्र की बनी हुई चिलिमिलिका (मच्छरदानी) रखना और इस्तमाल करना कल्पे ।

सूत्र – १९

साधु-साध्वी को जलाशय के किनारे खड़ा रहना, बैठना, सोना, अशन आदि आहार खाना, पीना, मल-मूत्र, श्लेष्म, नाक का मैल आदि का त्याग करना, स्वाध्याय, धर्म, जागरण करना या कायोत्सर्ग करना न कल्पे ।

सूत्र – २०-२१

साधु-साध्वी को सचित्र उपाश्रय में रहना न कल्पे, चित्ररहित उपाश्रय में रहना कल्पे । (चित्र राग आदि उत्पत्ति का निमित्त बन सकता है ।)

सूत्र – २२-२४

साध्वी को सागारिक की निश्रा रहित उपाश्रय में रहना न कल्पे, लेकिन निश्रावाले उपाश्रय में रहना कल्पे, साधु को दोनों प्रकार से रहना कल्पे । (साधुवर्ग सशक्त, दृढ़चित् और निर्भय हो इसलिए कल्पे ।)

सूत्र – २५

साधु-साध्वी को सागारिक उपाश्रय में रहना न कल्पे, अल्प सागारिक उपाश्रय में रहना कल्पे । (सागारिक यानि जहाँ आगार-गृहसम्बन्धी वस्तु, चित्र आदि रहे हो ।)

सूत्र – २६-२९

साधु को स्त्री सागारिक उपाश्रय में रहना न कल्पे, साध्वीओं को कल्पे, साधुओं को पुरुष सागारिक उपाश्रय में रहना कल्पे, साध्वीओं को न कल्पे ।

सूत्र – ३०-३१

साधुओं को प्रतिबद्ध आबादी में रहना न कल्पे, साध्वीओं को कल्पे । (उपाश्रय की दिवाल या उपाश्रय का किसी हिस्सा गृहस्थ के घर के साथ जुड़ा हो तो वो प्रतिबद्ध कहलाता है ।)

सूत्र – ३२-३३

घर के बीच होकर जिस उपाश्रय में आने-जाने का मार्ग हो उस उपाश्रय में साधु का रहना न कल्पे, साध्वी का रहना कल्पे ।

सूत्र – ३४

साधु-साध्वी किसी के साथ कलह होने के बाद क्षमा याचना करके कलह को उपशान्त करे, प्रायश्चित्त

आदि से कलह न करने के लिए प्रतिबद्ध होकर खुद भी उपशान्त हो जाए उसके बाद जिसके साथ क्षमायाचना की हो उसकी ईच्छा हो तो भी आदर-सन्मान, वंदन-सहवास, उपशमन करे और ईच्छा न हो तो आदर आदि न करे, जो उपसमता है उसे आराधना है, जो उपशमक नहीं है उसे आराधना नहीं है, हे भगवन् ! ऐसा क्यों कहा ? क्योंकि श्रमण जीवन में उपशम ही श्रामण्य का सार है ।

सूत्र – ३५-३६

साधु-साध्वी को बारिस में विहार करना न कल्पे, शर्दी-गर्मी में विहार करना कल्पे ।

सूत्र – ३७

साधु-साध्वी की विरुद्ध-अराजक या विरोधी राज में जल्द या बार-बार आना-जाना या आवागमन न कल्पे। जो साधु-साध्वी इस प्रकार करे-करवाए या करनेवाले की अनुमोदना करे तो वो तीर्थंकर ओर राजा दोनों की आज्ञा का अतिक्रमण करता है और अनुद्घातिक चातुर्मासिक परिहारस्थान प्रायश्चित्त के योग्य होते हैं । ('वेरज्ज' शब्द के अर्थ कई हैं, बरसों से चला आता वैर, दो राज्य के बीच वैर हो, जहाँ पास के राज्य के गाँव आदि जला देनेवाला राजा हो, जिसके मंत्री सेनापति राजा विरुद्ध हो आदि ।

सूत्र – ३८-३९

गृहस्थ के घर में आहार के लिए आए या विचार (स्थंड़िल) भूमि या स्वाध्यायभूमि जाने के लिए बाहर नीकलनेवाले साधु को कोई वस्त्र, पात्र, कम्बल या रजोहरण के लिए पूछे तब वस्त्र आदि को आगार के साथ ग्रहण करे, लाए गए वस्त्र आदि को आचार्य के चरणों में रखकर दूसरी बार आज्ञा लेकर अपने पास रखना या उसका इस्तमाल करना कल्पे ।

सूत्र – ४०-४१

गृहस्थ के घर में आहार के लिए गए या विचार (स्थंड़िल) भूमि या स्वाध्याय भूमि जाने के लिए नीकले साध्वी को किसी वस्त्र आदि ग्रहण करने के लिए पूछे तो आगार रखकर वस्त्र आदि ग्रहण करे, लाए हुए वस्त्र आदि को प्रवर्तिनी के चरणों में रखकर पुनः आज्ञा लेकर उसे अपने पास रखना या इस्तमाल करना कल्पे ।

सूत्र – ४२-४७

साधु-साध्वी को रात को या विकाल को (संध्याकाल) १. पूर्वप्रतिलेखित शय्या संस्तारक छोड़कर अशन, पान, खादिम, स्वादिम लेना न कल्पे, उसी तरह, २. चोरी करके या लिनकर ले गए वस्त्र का इस्तमाल करके धोकर, रंगकर, वस्त्र पर की निशानी मिटाकर, फेरफार करके या सुवासित करके भी यदि कोई दे जाए तो ऐसे आहृत-चाहत वस्त्र अलावा के वस्त्र, पात्र, कम्बल या रजोहरण लेना न कल्पे, ३. मार्गगमन करना न कल्पे, ४. संखड़ि में जाना या संखड़ि (बड़ा जीमणवार) के लिए अन्यत्र जाना न कल्पे ।

सूत्र – ४८-४९

रात को या संध्या के वक्त स्थंड़िल या स्वाध्याय भूमि जाने के लिए उपाश्रय के बाहर जाना-आना अकेले साधु या साध्वी को न कल्पे । साधु को एक या दो साधु के साथ और साध्वी को एक, दो, तीन साध्वी साथ हो तो बाहर जाना कल्पे ।

सूत्र – ५०

साधु-साध्वी को पूर्व में अंग, मगध, दक्खण में कोशाम्बी, पश्चिम में थूणा, उत्तर में कुणाल तक जाना कल्पे इतना ही आर्य क्षेत्र है उसके बाहर जाना न कल्पे । ज्ञान-दर्शन-चारित्र वृद्धि की संभावना हो तो जा सके (ऐसा मैं तुम्हें कहता हूँ ।)

उद्देशक-१-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-२

सूत्र – ५१-५३

उपाश्रय के आसपास या आँगन में चावल, गेहूँ, मुग, उड़द, तल, कलथी, जव या ज्वार का अलग-अलग ढ़ग हो वो ढ़ग आपस में सम्बन्धित हो, सभी धान्य ईकट्ठे हो या अलग हो तो जघन्य से गीले हाथ की रेखा सूख जाए और उत्कृष्ट से पाँच दिन जितना वक्त भी साधु-साध्वी का वहाँ रहना न कल्पे, लेकिन यदि ऐसा जाने कि चावल आदि छूटे-फैले हुए अलग ढ़ग में या आपस में मिले नहीं है लेकिन ढ़ग या पूँज रूप भित्त के सहारे-कुंड़ में राख आदि से चिह्न किए गए, गोबर से लिपित, ढ़ँके हुए हैं तो शर्दी-गर्मी में रहना कल्पे, यदि ऐसा जाने राशि-पुंज आदि के रूप में नहीं लेकिन कोठा या पानी में भरे, मंच या माला पर सुरक्षित, मिट्टी या गोबर लिपित, बरतन से ढ़ँके, निशानी किए गए या मुँह बन्द किए हो तो साधु-साध्वी को वर्षावास रहना भी कल्पे ।

सूत्र – ५४-५७

उपाश्रय के आँगन में मदिरा या मद्य के भरे घड़े रखे गए हो, अचित्त ऐसे ठंड़े या गर्म पानी के घड़े वहाँ भरे हो, वहाँ पूरी रात अग्नि सुलगता हो, जलता हो तो गीले हाथ की रेखा सूख जाए उतना काल रहना न कल्पे शायद गवेषणा करने के बावजूद भी दूसरा स्थान न मिले तो एक या दो रात्रि रहना कल्पे लेकिन यदि ज्यादा रहे तो जितने रात-दिन ज्यादा रहे उतना छेद या परिहार प्रायश्चित्त आए ।

सूत्र – ५८-६०

उपाश्रय के आँगन में मावा, दूध, दहीं, मक्खन, घी, तेल, गुड़, मालपुआ, लड्डु, पूरी, शीखंड़, शिखरण रखे–फैले, ढ़ग के रूप में या छूटे पड़े हो तो साधु-साध्वी को वहाँ हाथ के पर्व की रेखा सूख जाए उतना काल रहना न कल्पे, लेकिन यदि अच्छी तरह से ढ़गरूप से, दीवार की ओर कुंड़ बनाकर, निशानी या अंकित करके या ढ़ँके हुए हो तो शर्दी-गर्मी में रहना कल्पे, यदि ढ़ग या पूँज आदि रूप में नहीं लेकिन कोठा या कल्प में भरे, मंच या माले पर सुरक्षित, कोड़ी या घड़े में रखे गए हो, जिसके मुँह मिट्टी या गोबर से लिप्त हो, बरतन से ढ़ँके हो, निशानी या मुहर लगाई हो तो वहाँ वर्षावास करना भी कल्पे ।

सूत्र – ६१-६२

आगमन गृह, चारो ओर खुले घर, छत या पेड़ या अल्प आवृत्त आकाश के नीचे साध्वी का रहना न कल्पे, अपवाद से साधु को कल्पे ।

सूत्र – ६३

जिस उपाश्रय का स्वामी एक ही हो वो एक सागारिक पारिहारिक और जहाँ दो, तीन, चार, पाँच स्वामी हो तो वो सब सागारिक पारिहारिक है । (यदि ज्यादा सागारिक हो तो) वहाँ एक को कल्पक सागारिक की तरह स्थापना करके उसे पारिहारिक मानकर बाकी वो वहाँ से आहार आदि लेने जाना । (सागारिक यानि शय्यातर या वसति के स्वामी, पारिहारिक यानि जिसके अन्न पानी को परिहार त्याग करना है वो, कल्पाक यानि किसी एक को मुख्य रूप से स्थापित करना, निव्विसेज्ज शय्यातर न गिनना वो ।)

सूत्र – ६४-६८

साधु-साध्वी को सागारिक पिंड़ यानि वसति दाता के घर का आहार, जो घर के बाहर न ले गए हो और शायद दूसरों के वहाँ बने आहार के साथ मिश्र हुआ हो या न हुआ हो – उसे लेना न कल्पे, यदि घर के बाहर वो पिंड़ ले गए हो लेकिन दूसरों के वहाँ बने आहार के साथ मिश्र न हुआ हो तो भी लेना न कल्पे, लेकिन यदि मिश्र आहार हो तो लेना कल्पे, यदि वो पिंड़ बाहर के आहार के साथ मिश्रित न हो तो वो उसे मिश्र करना न कल्पे, यदि उसे मिश्रित करे, करवाए, करनेवाले की अनुमोदना करे तो वो लौकिक और लोकोत्तर मर्यादा का अतिक्रमण करते हुए अनुद्घातिक चातुर्मासिक परिहार तप समान प्रायश्चित्त के भागी होते हैं ।

सूत्र – ६९-७०

यदि दूसरे घर से आए हुए आहार को सागारिकने अपने घर में ग्रहण किया हो और उसे दे तो साधु-साध्वी को लेना न कल्पे, उसका स्वीकार न किया हो और फिर दे तो कल्पे ।

सूत्र – ७१-७२

सागारिक के घर से दूसरे घर में ले गए आहार का यदि गृहस्वामी ने स्वीकार न किया हो और कोई दे तो साधु को लेना न कल्पे, यदि गृहस्वामी ने स्वीकार कर लिया हो और फिर कोई दे तो लेना कल्पे ।

सूत्र – ७३-७४

(सागारिक एवं अन्य लोगों के लिए संयुक्त निष्पन्न भोजन में से) सागारिक का हिस्सा निश्चित्-पृथक् निर्धारित अलग न नीकाला हो और उसमें से कोई दे तो साधु-साध्वी को लेना न कल्पे, लेकिन यदि सागारिक का हिस्सा अलग किया गया हो और कोई दे तब लेना कल्पे ।

सूत्र – ७५-७८

सागारिक को अपने पूज्य पुरुष या महेमान को आश्रित करके जो आहार-वस्त्र-कम्बल आदि उपकरण बनाए हो या देने के लिए रखे हो वो पूज्यजन या अतिथि को देने के बाद जो कुछ बचा हो वो सागारिक को परत करने के लायक हो या न हो, बचे हुए हिस्से में से सागारिक या उसके परिवारजन कुछ दे तो साधु-साध्वी को लेना न कल्पे, वो पूज्य पुरुष या अतिथि दे तो भी लेना न कल्पे ।

सूत्र – ७९

साधु-साध्वी को पाँच तरह के वस्त्र रखना या इस्तमाल करना कल्पे । जांगमिक-गमनागमन करते भेड़-बकरी आदि के बाल में से बने, भांगिक अलसी आदि के छिलके से बने, सानक शण के बने, पीतक-कपास के बने, तिरिड़पट्ट-तिरिड़वृक्ष के वल्कल से बने वस्त्र ।

सूत्र – ८०

साधु-साध्वी को पाँच तरह के रजोहरण रखना या इस्तमाल करना कल्पे । ऊनी, ऊंट के बाल का, शण का, वच्चक नाम के घास का, मुँज घास फूटकर उसका कर्कश हिस्सा दूर करके बनाया हुआ ।

उद्देशक-२-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-३

सूत्र – ८१-८२

साधु को साध्वी के और साध्वी को साधु के उपाश्रय में रहना, बैठना, सोना, निद्रा लेना, सो जाना, अशन आदि आहार करना, मल-मूत्र, कफ-नाक के मैल का त्याग करना, स्वाध्याय, ध्यान या कायोत्सर्ग करना न कल्पे ।

सूत्र – ८३-८४

साध्वी को (शयन-आसन के लिए) रोमवाला चमड़ा लेना न कल्पे, साधु को कल्पे, लेकिन वो इस्तमाल किया गया या नया न हो, वापस करने का हो, केवल एक रात के लिए लाया गया हो लेकिन कईं रात के लिए उपयोग न करना हो तो कल्पे ।

सूत्र – ८५-८८

साधु-साध्वी को अखंड़ चमड़ा, वस्त्र या पूरा कपड़ा पास रखना या उपयोग करना न कल्पे, लेकिन चर्मखंड़, टुकड़े किए गए कपड़े में से नाप के अनुसार फाड़कर रखे हुए वस्त्र रखना और उपभोग करना कल्पे ।

सूत्र – ८९-९०

साधु को अवग्रहानंतक (गुप्तांग आवरक वस्त्र और अवग्रह पट्टक) अवग्रहानंतक आवरण वस्त्र रखना या इस्तमाल करना न कल्पे, साध्वी को कल्पे ।

सूत्र – ९१

गृहस्थ के घर आहार लेने गए हुए साध्वी को यदि वस्त्र की आवश्यकता हो तो यह वस्त्र मैं अपने लिए लेती हूँ ऐसा स्वनिश्रा से वस्त्र लेना न कल्पे । लेकिन प्रवर्तिनी की निश्रा में लेना कल्पे (यानि प्रवर्तिनी आज्ञा न दे तो वस्त्र परत करना ।) यदि प्रवर्तिनी विद्यमान न हो तो वहाँ विद्यमान ऐसे आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, स्थविर, गणि, गणधर, गणावच्छेदक या जो गीतार्थ हो उसकी निश्रा में वस्त्र लेना कल्पे ।

सूत्र – ९२-९३

पहली बार प्रव्रजित होनेवाले साधु को रजोहरण गुच्छा, पात्र और तीन अखंड़ वस्त्र, (साध्वी को चार अखंड़ वस्त्र) अपने साथ ले जाकर प्रव्रजित होना कल्पे, यदि पहले प्रव्रजित हुए हो तो न कल्पे लेकिन यथा परिगृहित वस्त्र लेकर आत्मभाव से प्रव्रजित होना कल्पे । (यहाँ दीक्षा-बड़ी दीक्षा के अनुसंधान में समझना ।)

सूत्र – ९४

साधु-साध्वी को प्रथम समवसरण यानि वर्षावास में वस्त्र ग्रहण करना न कल्पे, लेकिन दूसरे समवसरण यानि वर्षावास-चातुर्मास के बाद कल्पे ।

सूत्र – ९५-९९

साधु-साध्वी को चारित्र-पर्याय के क्रम में वस्त्र शय्या-संथारा ग्रहण करना और वंदन करना कल्पे ।

सूत्र – ९८-१००

साधु-साध्वी को गृहस्थ के घर में या दो घर के बीच खड़ा रहना, बैठना, खड़े-खड़े कायोत्सर्ग करना, चार-पाँच गाथा का उच्चारण, पदच्छेद, सूत्रार्थकथन, फलकथन करना, पाँच महाव्रत के उच्चारण आदि करना न कल्पे। (शायद किसी उत्कट जिज्ञासावाले हो तो) केवल एक दृष्टांत, एक प्रश्नोत्तर, एक गाथा या एक श्लोक का एक स्थान पर स्थिर रहकर उच्चारण आदि करना कल्पे ।

सूत्र – १०१-१०२

साधु-साध्वी को सागारिक के शय्या-संस्तारक जो ग्रहण किए हो वो काम पूरा होने पर ''अविकरण'' (जिस तरह से लिया हो उसी तरह परत न करना) रखकर गमन करना न कल्पे, ''विकरण'' (उसी रूप में परत)

करके गमन करना कल्पे ।

सूत्र – १०३

साधु-साध्वी को प्रातिहारिक (परत करने को योग्य) या सागारिक (शय्यातर) के शय्यासंथारा यदि गुम हो जाए तो उसे ढूँढ़ना चाहिए, यदि मिल जाए तो जिसका हो उसे परत करना चाहिए, यदि न मिले तो फिर से आज्ञा लेकर दूसरा शय्या-संथारा ग्रहण करके इस्तमाल करना चाहिए ।

सूत्र – १०४

जिस दिन श्रमण-साधु, शय्या-संथारा छोड़कर विहार करे उसी दिन से या तब दूसरे श्रमण-साधु आ जाए तो पूर्वगृहित आज्ञा से शय्या संथारा ग्रहण कर सकते हैं । क्योंकि अवग्रह गीले हाथ की रेखा सूख जाए तब तक होता है ।

सूत्र – १०५

यदि उस उपाश्रय में साधु-साध्वी जरुरी अचित्त चीज भूल गए या छोड़ गए हो (नए आनेवाले साधु-साध्वी) पूर्वगृहीत आज्ञा से ग्रहण कर सकते हैं, क्योंकि अवग्रह नीले हाथ की रेखा सूख जाए तब तक होता है ।

सूत्र – १०६-१०७

जो घर इस्तमाल में न लिया जा रहा हो, अनेक स्वामी में से किसी एक स्वामी ने खुद के आधीन न किया हो, किसी व्यक्ति के द्वारा परिगृहीत न हो या किसी यक्ष-देव आदि ने वहाँ निवास किया हो उस घर का पहला जो मालिक हो उसकी आज्ञा लेकर वहाँ (साधु-साध्वी) रह सकते हैं, (उससे विपरीत) यदि वो घर काम में लिया जाता हो, एक स्वामी हो, अन्य से परिगृहीत हो तो भिक्षुभाव से आए हुए दूसरे साधु को दूसरी बार आज्ञा लेनी चाहिए । क्योंकि अवग्रह गीले हाथ की रेखा सूख जाए तब तक है ।

सूत्र – १०८

घर-दीवार किला और नगर मध्य का मार्ग, खाई, रास्ता या झाड़ी के पास स्थान ग्रहण करना हो तो उसके स्वामी और राजा की पूर्व अनुज्ञा है । यानि साधु-साध्वी आज्ञा लिए बिना वहाँ रह सकते हैं ।

सूत्र – १०९

गाँव यावत् पाटनगर के बाहर शत्रुसेना दल देखकर साधु-साध्वी को उसी दिन से वापस आना कल्पे लेकिन बाहर रहना न कल्पे, जो साधु-साध्वी बाहर रात्रि रहे, रहने का कहे, कहनेवाले की अनुमोदना करे तो जिनाज्ञा और राजाज्ञा का उल्लंघन करते हुए अनुद्घातिक चातुर्मासिक परिहारस्थान प्रायश्चित्त को प्राप्त करते हैं ।

सूत्र – ११०

गाँव यावत् संनिवेश में पाँच कोश का अवग्रह ग्रहण करना कल्पे । भिक्षा आदि के लिए ढ़ाई कोश जाने के – ढ़ाई कोश आने का कल्पे ।

उद्देशक-३-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-४

सूत्र – १११

अनुद्घातिक प्रायश्चित्त पात्र इन तीनों बताए हैं–हस्तकर्म करनेवाले, मैथुन सेवन करनेवाले, रात्रि भोजन करनेवाले । (अनुद्घातिक जिस दोष की गुरु प्रायश्चित्त से कठिनता से शुद्धि हो सकती है, वो ।)

सूत्र – ११२

पारांचिक प्रायश्चित्त पात्र तीन बताए हैं–दुष्ट, प्रमत्त, परस्पर मैथुनसेवी । (पारांचिक प्रायश्चित्त के दश भेद में से सबसे कठिन प्रायश्चित्त, दुष्ट–कषाय से और विषय से अधम बने, प्रमत्त, मद्य-विषय, कषाय, विकथा, निद्रा से प्रमादाधीन हुए ।)

सूत्र – ११३

अनवस्थाप्य प्रायश्चित्त पात्र यह तीन बताए हैं । साधर्मिक चीज की चोरी करनेवाले, अन्यधर्मी की चीज की चोरी करनेवाले, हाथ से ताड़न करनेवाले ।

सूत्र – ११४-११५

जात नपुंसक, कामवासना दमन में असमर्थ, पुरुषत्वहीन कायर पुरुष । इन तीन तरह के पुरुष को प्रव्रज्या देना, मुंड़ित करना, शिक्षा देने के लिए, उपस्थापना करने के लिए, एक मांड़ली में आहार करने के लिए या हंमेशा साथ रखने के लिए योग्य नहीं । यानि इन तीनों में से किसी को प्रव्रजित करने के आदि कार्य करना न कल्पे

सूत्र – ११६

अविनीत, घी आदि विगई में आसक्त, अनुपशान्त क्रोधी, इन तीन को वाचना देना न कल्पे, विनित विगई में अनासक्त, उपशान्त क्रोधवाले को कल्पे ।

सूत्र – ११७-११८

दुष्ट-तत्त्वोपदेष्टा प्रति द्वेष रखनेवाले, मूल-गुणदोष से अनभिज्ञ, व्युद्ग्राहित, अंधश्रद्धावाला दुराग्रही यह तीन दुर्बोध्य बताए हैं । अदुष्ट, अमूढ़, अव्युद्ग्राहित यह तीन सुबोध्य बताए हैं ।

सूत्र – ११९-१२०

ग्लान साध्वी हो तो उसके पिता, भाई या पुत्र और ग्लान साधु हो तो उसकी माता, बहन या पुत्री वो साधु या साध्वी गिर रहे हो तो हाथ का सहारा दे, गिर गए हो तो खड़े करे, अपने आप खड़ा होना-बैठने के लिए असमर्थ हो तो सहारा दे तब वो साधु-साध्वी विजातीय व्यक्ति के स्पर्श की (पूर्वानुभूत मैथुन की स्मृति से) अनुमोदना करे तो अनुद्घातिक चातुर्मासिक परिहारस्थान आता है ।

सूत्र – १२१-१२२

साधु-साध्वी ने अशन आदि आहार प्रथम पोरिसी यानि कि प्रहर में ग्रहण किया है और अन्तिम तक का काल या दो कोश की हद से ज्यादा दूर के क्षेत्र तक अपने पास रखे या इस काल और क्षेत्र हद का उल्लंघन तक वो आहार रह जाए तो वो आहार खुद न खाए, अन्य साधु-साध्वी को न दे, लेकिन एकान्त में सर्वथा अचित्त स्थान पर परठवे । यदि ऐसा न करते हुए खुद खाए या दूसरे साधु-साध्वी को दे तो लघुचौमासी प्रायश्चित्त के भागी होते हैं

सूत्र – १२३

आहार के लिए गृहस्थ के गृहमें प्रवेश कर के निर्ग्रन्थ को उद्गम उत्पादन और एषणा दोषमें से किसी एक दोषयुक्त अनेषणीय अन्न-पान ग्रहण कर लिया हो तो वो आहार उसी वक्त ''उपस्थापना न की गई हो ऐसे'' शिष्य को देना या एषणीय आहार देने के बाद देना कल्पे । यदि कोई अनुपस्थापित शिष्य न हो तो वो अनेषणीय आहार खुद न खाए, दूसरों को न दे, लेकिन एकान्त ऐसे अचित्त स्थान में प्रतिलेखन-प्रमार्जन करके परठना चाहिए

सूत्र – १२४

जो अशन आदि आहार कल्पस्थित (अचेलक आदि दश तरह के कल्प में स्थित प्रथम चरम जिनशासन के साधु) के लिए बनाया हो तो अकल्पस्थित (अचेलक आदि कल्प में स्थित नहीं है ऐसे मध्य के बाईस जिनशासन के साधु) को कल्पे ।

सूत्र – १२५

यदि कोई भिक्षु स्वगण में से नीकलकर अन्य गण का स्वीकार करना चाहे तो आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्तक, स्थविर, गणि, गणधर या गणावच्छेदक को पूछे बिना अन्य गण का स्वीकार करना न कल्पे लेकिन आचार्य यावत् गणावच्छेदक को पूछकर अन्य गण का स्वीकार कल्पे । यदि वो आज्ञा दे तो अन्य गण का स्वीकार कल्पे । और यदि आज्ञा न दे तो अन्य गण का स्वीकार करना न कल्पे ।

सूत्र – १२६

यदि गणावच्छेदक स्वगण में से नीकलकर अन्य गण का स्वीकार करना चाहे तो पहले अपना पद छोड़कर अन्य गण का स्वीकार करना कल्पे, आचार्य यावत् गणावच्छेदक को पूछे बिना अन्य गण का स्वीकार करना न कल्पे, लेकिन यदि पूछकर आज्ञा दे तो कल्पे और आज्ञा न दे तो न कल्पे ।

सूत्र – १२७

यदि आचार्य या उपाध्याय शायद अपने गण में से नीकलकर दूसरे गण में जाना चाहे तो उनको अपना पद त्याग करके दूसरे गण में जाना कल्पे । (जिन्हें अपना पदभार सौंपा हो ऐसे) आचार्य यावत् गणावच्छेदक को पूछे बिना अन्य गण का स्वीकार करना न कल्पे । पूछने के बाद आज्ञा मिले तो अन्य गण में जाना कल्पे और आज्ञा न मिले तो जाना न कल्पे ।

सूत्र – १२८-१३०

यदि कोई साधु-गणावच्छेदक, आचार्य या उपाध्याय अपने गण से नीकलकर दूसरे गण के साथ मांड़ली व्यवहार करना चाहे तो यदि पद पर हो तो अपने पद का त्याग करना और सभी आचार्य यावत् गणावच्छेदक की आज्ञा लिए बिना न कल्पे । यदि आज्ञा माँगे और आचार्य आदि से उन्हें आज्ञा मिले तो अन्य गण के साथ मांड़ली व्यवहार कल्पे, यदि आज्ञा न मिले तो न कल्पे–अन्य गण में उत्कृष्ट धार्मिक शिक्षा आदि प्राप्त होने से न कल्पे ।

सूत्र – १३१-१३३

यदि कोई साधु, गणावच्छेदक, आचार्य या उपाध्याय दूसरे गण के आचार्य या उपाध्याय का गुरुभाव से स्वीकार करना चाहे तो जो पदस्थ हैं उन्हें अपने पद का त्याग करना और भिक्षु आदि सबको आचार्य यावत् गणावच्छेदक की आज्ञा लेनी चाहिए । यदि आज्ञा माँगे लेकिन आज्ञा न मिले तो अन्य आचार्य, उपाध्याय का गुरु भाव से स्वीकार न कल्पे । यदि आज्ञा दे तो कल्पे । स्वगण के आचार्य-उपाध्याय को कारण बताए बिना अन्य आचार्य-उपाध्याय का गुरुभाव से स्वीकार करना न कल्पे लेकिन कारण बताकर कल्पे ।

सूत्र – १३४

यदि कोई साधु रात को या विकाल संध्या के वक्त मर जाए तो उस मृत भिक्षु के शरीर को किसी वैयावच्च करनेवाले साधु एकान्त में सर्वथा अचित्त प्रदेश से परठने के लिए चाहे तब यदि वहाँ उपयोग में आ सके वैसा गृहस्थ का अचत्त उपकरण हो तो वो उपकरण गृहस्थ का ही है ऐसा मानकर ग्रहण करे । उससे उस मृत भिक्षु के शरीर को एकान्त में सर्वथा अचित्त प्रदेश में परठवे । उसके बाद उस उपकरण को यथास्थान रख दे ।

सूत्र – १३५

यदि कोई साधु कलह करके उस कलह को उपशान्त न करे तो उसे गृहस्थ के घर में भक्त-पान के लिए प्रदेश-निष्क्रमण करना, स्वाध्याय भूमि या मल-मूत्र त्याग भूमि में प्रवेश करना, एक गाँव से दूसरे गाँव जाना, एक

गण से दूसरे गण में जाना, वर्षावास रहना न कल्पे । जहाँ वो अपने बहुश्रुत या बहु आगमज्ञ आचार्य या उपाध्याय को देखे वहाँ उनके पास आलोचना-प्रतिक्रमण, निंदा-गर्हा करे, पाप से निवृत्त हो, पाप फल से शुद्ध हो, पुनः पापकर्म न करने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध हो, यथायोग्य तपकर्म प्रायश्चित्त स्वीकार करे, लेकिन वो प्रायश्चित्त श्रुतानुसार दिया गया हो तो उसे ग्रहण करना लेकिन श्रुतानुसार न दिया हो तो ग्रहण न करना । यदि वो कलह करनेवाला श्रुतानुसार प्रस्थापित प्रायश्चित्त स्वीकार न करे तो उसे गण से बाहर नीकाल देना ।

सूत्र – १३६

जिस दिन परिहारतप स्वीकार किया हो तो उस दिन परिहार कल्प में रहनेवाले भिक्षु को एक घर से विपुल सुपाच्य आहार दिलाना आचार्य-उपाध्याय को कल्पे उसके बाद उसे अशन आदि आहार एक बार या बार-बार देना न कल्पे । लेकिन उसे खड़ा करना, बिठाना, बगल बदलना, उसके मल-मूत्र, कफ परठना, मल-मूत्र लिप्त उपकरण को शुद्ध करना आदि में से किसी एक तरह की वैयावच्च करना कल्पे । यदि आचार्य-उपाध्याय ऐसा जाने कि यह ग्लान, भूखे, प्यासे तपस्वी दूबले और थककर गमनागमन रहित मार्ग में मूर्छित होकर गिर जाएंगे तो उसे अशन आदि आहार एक बार या बार-बार देना कल्पे ।

सूत्र – १३७-१३८

गंगा, जमुना, सरयू, कोशिका, मही यह पाँच महानदी समुद्रगामिनी हैं, प्रधान हैं, प्रसिद्ध हैं । यह नदियाँ एक महिने में एक या दो बार ऊतरना या नाँव से पार करना साधु-साध्वी को न कल्पे, शायद ऐसा मालूम हो कि कुणाला नगरी के पास ऐरावती नदी एक पाँव पानी में और एक पाँव भूमि पर रखकर पार की जा सकती है तो एक महिने में दो या तीन बार भी पार करना कल्पे, यदि वो मुमकीन न हो तो एक महिने में दो या तीन बार ऊतरना या नाँव से पार करना न कल्पे ।

सूत्र – १३९-१४२

जो उपाश्रय सूखा घास और घास के ढ़ग, चावल आदि का भूँसा और उसके ढ़ग, पाँच वर्णीय लील-फूल, अंड़, बीज, कीचड़, मकड़ी की जाल रहित हो लेकिन उपाश्रय की छत की ऊंचाई कान से भी नीची हो तो ऐसे उपाश्रय में साधु-साध्वी को शर्दी-गर्मी में रहना न कल्पे, लेकिन कान से ऊंची छत हो तो कल्पे, यदि खड़ी हुई व्यक्ति सीधे दो हाथ ऊपर करे तब उस हाथ की ऊंचाई से ज्यादा छत नीची हो तो उस उपाश्रय में वर्षा में रहना न कल्पे, यदि छत ऊंची हो तो कल्पे ।

उद्देशक-४-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-५

सूत्र – १४३-१४६

किसी देव या देवी स्त्रीरूप की विकुवर्णाकर साधु को और किसी देवी या देव पुरुष रूप विकुर्वकर साध्वी को आलिंगन करे और वो साधु या साध्वी स्पर्श का अनुमोदन करे तो मैथुन सेवन के दोष का हिस्सेदार होता है । और अनुद्घातिक चातुर्मासिक परिहार स्थान प्रायश्चित्त का भागी बनता है ।

सूत्र – १४७

जो किसी साधु कलह करे और उस कलह को उपशान्त किए बिना दूसरे गण में संमिलित होकर रहना चाहे तो उसे पाँच अहोरात्र का पर्याय छेद करना कल्पे और उस भिक्षु को सर्वथा शान्त-प्रशान्त करके पुनः उसी गण में वापस भेजना योग्य है । या गण की संमति के अनुसार करना योग्य है ।

सूत्र – १४८-१५१

जो साधु सूर्योदय के बाद और सूर्यास्त के पहले भिक्षाचर्या करने के प्रतिज्ञावाले हो वो समर्थ, स्वस्थ और हंमेशा प्रतिपूर्ण आहार करते हो या असमर्थ अस्वस्थ और हंमेशा प्रतिपूर्ण आहार न करते हो तो ऐसे दोनों को सूर्योदय सूर्यास्त हुआ कि नहीं ऐसा शक हो तो भी सूर्योदय के पहले या सूर्यास्त के बाद जो आहार मुँह में, हाथ में या पात्र में हो वो परठवे और मुख आदि की शुद्धि कर ले तो जिनाज्ञा का अतिक्रमण नहीं होता । वो आहार खुद करे या दूसरे साधु को दे तो उसे रात्रिभोज का दोष और अनुद्घातिक चातुर्मासिक परिहारस्थान प्रायश्चित्त आता है

सूत्र – १५२

यदि कोई साधु-साध्वी को रात्रि या संध्या के वक्त पानी और भोजन सहित ऊबाल आए तो उसे थूँककर वस्त्र आदि से मुँह साफ कर ले तो जिनाज्ञा का उल्लंघन नहीं होता । लेकिन यदि उछाला या उद्गाल को नीगल जाए तो रात्रि भोजन सेवन का दोष लगे और अनुद्घातिक-चातुर्मासिक परिहारस्थान प्रायश्चित्त का हिस्सेदार बने ।

सूत्र – १५३-१५४

कोई साधु-साध्वी आहार के लिए गृहस्थ के घर में प्रवेश करे और पात्र में दो इन्द्रिय आदि जीव या सचित्त रज हुई देखे तो यदि उसे नीकालना या शोधना मुमकीन हो तो नीकाले या शोधन करे, यदि नीकालना या शोधन करना मुमकीन न हो तो वो आहार खुद न खाए, दूसरों को न दे, लेकिन किसी एकान्त अचित्त पृथ्वी का पड़िलेहण या प्रमार्जन करके वहाँ परठवे, उसी तरह पात्र में उष्ण आहार हो और उसके ऊपर पानी, पानी के कण या बूँद गिरे तो उस आहार का उपभोग करे लेकिन पूर्वगृहीत आहार ठंड़ा हो और उस पर पानी, पानी के कण बूँद गिरे तो वो आहार खुद न खाए, दूसरों को न दे लेकिन एकान्त अचित्त पृथ्वी का पड़िलेहण प्रमार्जन करके वहाँ परठवे ।

सूत्र – १५५-१५६

कोई साध्वी रात के या सन्ध्या के वक्त मल-मूत्र का परित्याग करे या शुद्धि करे उस वक्त किसी पशु के पंख के द्वारा साध्वी की किसी एक इन्द्रिय को छू ले, या साध्वी के किसी छिद्र में प्रवेश पा ले और वो स्पर्श या प्रवेश सुखद है (आनन्ददायक है) ऐसी प्रशंसा करे तो उसे हस्तकर्म का दोष लगता है और वो अनुद्घातिक मासिक प्रायश्चित्त की हिस्सेदार होती है ।

सूत्र – १५७-१६१

साध्वी का अकेले–१. रहना, २. आहार के लिए गृहस्थ के घर आना-जाना, ३. मल-मूत्र त्याज्य या स्वाध्याय भूमि आना-जाना, ४. एक गाँव से दूसरे गाँव विचरण करना, ५. वर्षावास रहना न कल्पे ।

सूत्र – १६२-१६४

साध्वी का नग्न होना, पात्र रहित (कर-पात्री) होना, वस्त्ररहित होकर कायोत्सर्ग करना न कल्पे ।

सूत्र – १६५-१६६

साध्वी को गाँव यावत् संनिवेश के बाहर हाथ ऊपर करके, सूर्य के सामने मुँह करके, एक पाँव पर खड़े रहकर आतापना लेना न कल्पे, लेकिन उपाश्रय में कपड़े पहनी हुई दशा में दोनों हाथ लम्बे करके पाँव समतोल रखकर खड़े होकर आतापना लेना कल्पे ।

सूत्र – १६७-१७८

साध्वी को इतनी बातें न कल्पे–१. ज्यादा देर कायोत्सर्ग में खड़ा रहना, २. भिक्षुप्रतिमा धारण करना, ३. उत्कटुक आसन पर बैठना, ४. दोनों पाँव पीछे के हिस्से को छू ले, गौ की तरह, दोनों पीछे के हिस्से के सहारे बैठकर एक पाँव हाथी की सूँड़ की तरह ऊपर करके, पद्मासन में, अर्ध पद्मासन में पाँच तरीके से बैठना, ५. वीरासन में बैठना, ६. दंड़ासन में बैठना, ६. लंगड़ासन में बैठना, ७. अधोमुखी होकर रहना, ८. उत्तरासन में रहना, ९. आम्रकुब्जिकासन में रहना, ९. एक बगल में सोने का अभिग्रह करना, १०. गुप्तांग ढ़ँकने के लिए चार अंगूल चौड़ी पट्टी जिसे 'आकुंचन पट्टक' कहते हैं वो रखना या पहनना (यह दश बातें साध्वी को न कल्पे ।)

सूत्र – १७९

साधु को आकुंचन पट्टक रखना या पहनना कल्पे ।

सूत्र – १८०-१८१

साध्वी को ''सावश्रय'' आसन में खड़े रहना या बैठना न कल्पे लेकिन साधु को कल्पे (सावश्रय यानि जिसके पीछे सहारा लेने के लिए लकड़ा आदि का तकिया लगा हो वैसी कुर्सी आदि ।)

सूत्र – १८२-१८३

साध्वी को सविषाणपीठ (बैठने की खटिया, चोकी आदि) या फलक पर खड़े रहना, बैठना न कल्पे । साधु को कल्पे ।

सूत्र – १८४-१८५

साध्वी को गोल नालचेवाला तुंबड़ा रखना या इस्तमाल करना न कल्पे, साधु को कल्पे ।

सूत्र – १८६-१८७

साध्वी को गोल (दंड़ी की) पात्र केसरिका (पात्रा पूजने की पुंजणी) रखनी या इस्तमाल करनी न कल्पे, साधु को कल्पे ।

सूत्र – १८८-१८९

साध्वी को लकड़े की (गोल) दंड़ीवाला पादपौंछन रखना या इस्तमाल करना न कल्पे, साधु को कल्पे ।

सूत्र – १९०

साधु-साध्वी उग्र बीमारी या आतंक बिना एक दूसरे का मूत्र पीना या मूत्र से एक दूसरे की शुद्धि करना न कल्पे ।

सूत्र – १९१-१९३

साधु-साध्वी को परिवासित (यानि रातमें रखा हुआ या कालातिक्रान्त ऐसे–१. तल जितना या चपटी जितना भी आहार करना और बूँद जितना भी पानी पीना, २. उग्र बीमारी या आतंक बिना अपने शरीर पर थोड़ा या ज्यादा लेप लगाना, ३. बीमारी या आतंक सिवा तेल, घी, मक्खन या चरबी लगाना या पिसना वो सब काम न कल्पे

सूत्र – १९४

परिहारकल्प स्थित (परिहार तप करते) साधु यदि वैयावच्च के लिए कहीं बाहर जाए और वहाँ परिहार

तप का भंग हो जाए, वो बात स्थविर अपने ज्ञान से या दूसरों के पास सुनकर जाने तो उसे अल्प प्रायश्चित्त देना चाहिए।

सूत्र – १९५

साधु-साध्वी आहार के लिए गृहस्थ के घर में प्रवेश करे और वहाँ किसी एक तरह का पुलाक भक्त यानि कि असार आहार ग्रहण करे, यदि वो गृहीत आहार से उस साधु-साध्वी का निर्वाह हो जाए तो उसी आहार से अहोरात्र पसार करे लेकिन दूसरी बार आहार ग्रहण करने के लिए गृहस्थ के घर में उसका प्रवेश करना न कल्पे । लेकिन यदि उसका निर्वाह न हो सके तो आहार के लिए दूसरी बार भी गृहस्थ के घर जाना कल्पे–इस प्रकार मैं (तुम्हें) कहता हूँ ।

उद्देशक-५-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

उद्देशक-६

सूत्र – १९६

साधु-साध्वी को यह छ वचन बोलने न कल्पे, जैसे कि असत्य मिथ्याभाषण, दूसरों की अवहेलना करती बोली, रोषपूर्ण वचन, कर्कश कठोर वचन, गृहस्थ सम्बन्धी जैसे कि पिता-पुत्र आदि शब्द और कलह शान्त होने के बाद भी फिर से बोलना ।

सूत्र – १९७

कल्प के छ प्रस्तार बताए हैं । यानि साध्वाचार के प्रायश्चित्त के छ विशेष प्रकार बताए हैं । प्राणातिपात-मृषावाद-अदत्तादान-ब्रह्मचर्यभंग-पुरुष न होना या दास या दासीपुत्र होना–इन छ में से कोई आक्षेप करे–जब किसी एक साधु-साध्वी पर ऐसा आरोप लगाए तब पहली व्यक्ति को पूछा जाए कि तुमने इस दोष का सेवन किया है यदि वो कहे कि मैंने वो नहीं किया तो आरोप लगानेवाले को कहा जाए कि तुम्हारी बात का सबूत दो । यदि आरोप लगानेवाला सबूत दे तो दोष का सेवन करनेवाला प्रायश्चित्त का भागी बने, यदि सबूत न दे सके तो आरोप लगाने वाला प्रायश्चित्त का भागी बने ।

सूत्र – १९८-२०१

साधु के पाँव के तलवे में तीक्ष्ण या सूक्ष्म काँटा-लकड़ा या पत्थर की कण लग जाए, आँख में सूक्ष्म जन्तु, बीज या रज गिरे और उसे खुद साधु या सहवर्ती साधु नीकालने के लिए या ढूँढ़ने के लिए समर्थ न हो तब साध्वी उसे नीकाले या ढूँढ़े तो जिनाज्ञा का उल्लंघन नहीं होता उसी तरह ऐसी मुसीबत साध्वी को हो तब साध्वी उसे नीकालने या ढूँढ़ने के लिए समर्थ न हो तो साधु उसे नीकाले तो जिनाज्ञा का उल्लंघन नहीं होता ।

सूत्र – २०२-२०९

दुर्ग, विषमभूमि या पर्वत पर से सरकती या गिरती, दलदल, कीचड़, शेवाल या पानी में गिरती या डूबती नौका पर चड़ती या ऊतरती, विक्षिप्त चित्तवाली हो (तब पानी में अग्नि में या ऊपर से गिरनेवाली) ऐसी साध्वी को यदि कोई साधु पकड़ ले या सहारा देकर बचाए तो जिनाज्ञा का उल्लंघन नहीं होता, उसी तरह प्रलाप करती या अशान्त चित्तवाली, भूत-प्रेत आदि से पीड़ित, उन्मादवाली या पागल किसी तरह के उपसर्ग के कारण से गिरनेवाली या भटकती साध्वी को पकड़ने वाले या सहारा देनेवाले साधु को जिनाज्ञा का उल्लंघन नहीं होता ।

सूत्र – २१०-२१३

कलह के वक्त रोकने के लिए, कठिन प्रायश्चित्त के कारण से चलचित्त हुए, अन्नजल त्यागी संथारा स्वीकार किया हो और अन्य परिचारिका साध्वी की कमी हुई हो, गृहस्थ जीवन के परिवार की आर्थिक भींस के कारण से विचलित मनोदशा के कारण से धनलोलुप बन गई हो तब इन सभी हालात में उस साध्वी को साधु ग्रहण करे, रोके, दूर ले जाए या सांत्वन आदि दे तो जिनाज्ञा का उल्लंघन नहीं होता ।

सूत्र – २१४

कल्प यानि साधु-साध्वी की आचारमर्यादा के छ परिमन्थ अर्थात् घातक कहलाए हैं । इस प्रकार कौकुत्च्य यानि कुचेष्टा या भांड़ चेष्टा संयम की घातक है, मौखर्य-वाचाल लेकिन सत्य वचन की घातक है, तिंतिनक-यह लोभी है आदि बबड़ाट एषणा समिति का घातक है, चक्षु की लोलुपता ईर्या समिति की घातक है, ईच्छा लोलुपता अपरिग्रहपन की घातक है और लोभ या वृद्धि से नियाणा करना मोक्षमार्ग-समकित के घातक हैं । क्योंकि भगवंत ने सभी जगह अनिदानकरण की ही प्रशंसा की है ।

सूत्र – २१५

कल्पदशा (साधु-साध्वी की आचार मर्यादा) छ तरह की होती है । वो इस प्रकार सामायिक चारित्रवाले की छेदोपस्थापना रूप, परिहार विशुद्धि तप स्वीकार करनेवाले की, पारिहारिक तप पूरे करनेवाले की, जिनकल्प की

और स्थविर कल्प की ऐसे छ तरह की आचार मर्यादा है । (विस्तार से समझने के लिए भाष्य और वृत्ति देखें ।) इस प्रकार मैं (तुम्हें) कहता हूँ ।

उद्देशक-६-का मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

३५ बृहत्कल्प-छेदसूत्र-२ का
मुनि दीपरत्नसागर कृत् हिन्दी अनुवाद पूर्ण

नमो नमो निम्मलदंसणस्स

પૂજ્યપાદ્ શ્રી આનંદ–ક્ષમા–લલિત–સુશીલ–સુધર્મસાગર ગુરૂભ્યો નમ:

३५

बृहत्कल्प

आगमसूत्र हिन्दी अनुवाद

[अनुवादक एवं संपादक]

आगम दीवाकर मुनि दीपरत्नसागरजी

[M.Com. M.Ed. Ph.D. श्रुत महर्षि]

વેબ સાઈટ:– (1) www.jainelibrary.org (2) deepratnasagar.in

ઈમેલ એડ્રેસ:- jainmunideepratnasagar@gmail.com મોબાઈલ 09825967397